

अस्सी के रत्ना खिंछा नार

आधुनिक भारतीय कला के पेरिस-बसे मूर्धन्य कलाकार सैयद हैदर रज़ा ने २२ फरवरी को उस के अस्सी बरस पूरे किए हैं। इस मौके पर देश में खास आयोजन हो रहे हैं। मुंबई और दिल्ली की कलावीथियों में उनके नए और पुराने चित्रों की प्रदर्शियां आयोजित हैं। पद्य विप्लवण दिए जाने की बात भले हमारी कला-विरोधी नीति की भेंट चढ़ गई; फ्रांस की सरकार उन्हें अपने विशिष्ट सम्मान से नवाज रही है। इसी सप्ताह दिल्ली और मुंबई में कवि-कलाप्रेमी अशोक वाजपेयी की लिखी-संपादित पुस्तक 'रज़ा' का लोकार्पण अपने में एक घटना होगा। उसी पुस्तक में शामिल रज़ा से पेरिस में हुई हफ्तों लंबी बातचीत के प्रमुख अंश हम यहां प्रस्तुत कर रहे हैं। साथ में रज़ा की अपनी नोटबुक से कुछ इंद्राज।

मैं

उस काम के बारे में जानना चाहता हूँ जिसे आप अपना अंतिम चरण कहते हैं। अगर आप भारत में होते तो किस प्रकार का काम कर रहे होते? आपको इस प्रकार का काम इतना भारतीय लगता है मानो वह पेरिस के अस्तित्व के प्रति उदासीन ही क्या यह कहना सही है?

नहीं। कला की बुनियादी समस्याओं और विशेषता: अपने काम से संदर्भ में मेरी जो समझ बनी है उसमें पेरिस की बड़ी प्रतिक्रिया है। फ्रांस में मेरे प्रवास ने मुझे बहुत कुछ दिया है और अगर मैं अमेरिका या लंदन में जाता तो कहानी दूसरी होती। मुझे पेरिस में जाना था, यह काफी सोच-विचार कर तय हुआ था। यहाँ बहुत उन्ने दर्ज के अलावा है। पेरिस में यह प्रभावशाली चीज है।

आपका काम पेरिस के संदर्भ में आप कह रहे थे कि आपकी भारतीयता भारतीय परंपरा से आई अवधारणाओं और विचारों से प्रेरणा मिलती है जिन्हें आप अपने काम में आत्मसात करते या उनका पुनराविकार करने की कोशिश करते रहे हैं। अब आप एक आदर्श हैं, भारतीय कला में आधुनिक आंदोलन के अग्रदूत रहे हैं और यहां आप परंपरा की ओर लौट रहे हैं। आपको इसमें कोई अंतर्विरोध लीखना है?

बिल्कुल नहीं। मेरी नोटबुक में पहला शब्द है 'समाधान' जो भारत में सदियों पार से बना आ रहा है। 'समाधान' सदियों पुराना है लेकिन इतना आधुनिक, बढ़ता-आता का विचार है।

गोपाल दूसरो न कोई' सभी पर लागू होता है। यह स्वयं को केवल एक-दूसरे पर नहीं बल मानव जाति पर अभिव्यक्त करता है। मेक्सिको, उत्तरी अमेरिका और इंग्लैंड में मोरबाई के भक्त ठीक उसी प्रकार हो सकते हैं, जिस प्रकार भारत में कर्नाटक किसी चीज के प्रति ऐसी भक्ति और एकनिष्ठ भाव मानवस जातियों का लक्षण है। दूसरा उदाहरण है ईसा मसीह जो संपूर्ण विश्व में किसी भी मनुष्य, धार्मिक अथवा उसाही व्यक्ति के लिए प्रेरणा का स्रोत है।

आप की नोटबुक में ज्यादातर सामग्री काव्य, दर्शन, धार्मिक व आध्यात्मिक ग्रंथों से संकलित की गई है। इन पुस्तकों में यदा-कदा चित्रकारों एवं कला-समीक्षकों की टिप्पणियां भी मिलती हैं। इससे ऐसा लगता कि कम से कम आपके विचारों अथवा चिंतन को चित्रकारों अथवा कला की दुनिया से जतनी अधिक प्रेरणा नहीं मिलती, जितनी कि साहित्य, काव्य की दुनिया और दार्शनिक, आध्यात्मिक एवं धार्मिक विचारों से।

बहुत ही कम बातें हैं जिन्हें मैंने स्वयं अपने शब्दों में लिखा है। जैसे 'चित्र बनाए नहीं जाते बल्कि बन जाते हैं।' मुझे सबसे अधिक प्रेरणा कविता से मिली है। भारतीय कविता के अंतिम हिंदी तथा उर्दू में तथा फ्रेंच कविता में ऐसी अद्भुत बातें कही गई हैं, जो हृदय की गहराइयों से इन्हें विश्वास के साथ जन्म लेती हैं तथा जिन्हें केवल शब्दों के माध्यम से ही व्यक्त किया जा सकता है। चित्रकार के लिए वे बातें कहना बहुत कठिन है; जैसे कि, उस्ताद, जिन्दगी कहा है, 'देखो अपने कानों से, सुनो अपनी आंखों से।' आज यह बहुत ही सुंदर और अद्भुत मत बन गया है। समय-समय पर प्रत्येक व्यक्ति को अपनी आंखें बंद करके सुनने और समझने का प्रयास करना चाहिए। मैं अरेब्य, गजानन माधव मुक्तिबोध और मोर को पढ़कर अभिप्रेत हो जाता हूँ। 'तम शून्य में तैरती है आनन्द-समीक्षा' - जैसी पंक्तियां। जब सुंदर बातों को रोचक हो से कहा जाता है तो मुझे अधिक आकर्षित करती हैं।

भारत में रहते हुए आपने एक बार कहा था कि अब मैं जहां तक हो सके, सफेद रंग का प्रयोग करना चाहता हूँ। आपने सीमा पुरीया के साथ मुंबई में एक प्रदर्शनी भी की थी लेकिन आजकल स्थितियों में जो काम आप कर रहे हैं वह रंगों से सजावटी है। सफेद रंग की ओर वापसी यहां नहीं दीखती।



अपनी बिंदु मंछला की एक कृति के साथ सैयद हैदर रज़ा

मुझे काम करने में कठिनाई होती। जीवन विभिन्न स्थितियों और परिस्थितियों से बना है। जब मेरी धारणा का और लौट रहा हूँ। मैं बार-बार रंगों की ओर लौट रहा हूँ।

कभी-कभी मुझे लगता है कि आप उन चित्रकारों में से एक हैं जिनका आलावा चित्र आज के चित्र से जन्म लेता है। विचारों और आपसी संबंध ऐसा मजबूत और सुगठित है पूरी तरह से कर सके: यह अभी-अभी शुरू हुआ है प्यु इसके लिए बहुत अधिक भावनात्मक शांति



के पांच बिंदुओं में उपस्थित था। पहला दूसरे का विकिरण है। इन सबसे परिणामस्वरूप एक बड़ा चित्र प्रगट होता जो उन तत्वों का संयोजन होगा जिनका मैंने छोटे चित्रों में प्रयोग किया है और जो मेरे लिए प्रारंभिक रूप से नहीं देखे। मुझे लगता है कि यह शायद कविता और मानव जीवन के अस्तित्व के प्रति मेरा भेष है। मूलभूत मानवीय भाव (सेवेन) जिन्हें हम सब कहते हैं, आज भी संगीत में विद्यमान हैं। साथ ही चित्र कला में भी वे विद्यमान हो सकते हैं। उदाहरण के लिए-मुझे लगता है कि शृंगार पर चित्र बनाना आसान है। राजस्थान पर चित्र बनाना संभव है आत्मा के सबसे विकसित रूप को चित्रित करना भी संभव है। मैं ज्यादा व्याख्या नहीं करता चाहता। मैं फोटोग्राफ नहीं हूँ मैं पत्रिका का रिपोर्टर भी नहीं हूँ। मैं धूलों की सबसे खूबसूरत ली का चित्र बना रहा हूँ। मैं नारी के

आप अपने चित्र में वास्तविक शब्दों का, इमारत का प्रयोग करते हैं। आप के पास एक

आ

कविताएं

शरद रंजन शरद

सहेजना

बेतारीब बड़े जीवन में कुछ भी तो छोट डालेंगे उसे पीथे की तरह और ध्यान रखेंगे यह भी कि वह अलग तो नहीं हो रहा जड़ से

फालतु चीजों का अंबार लगे घर में तो कर देंगे कुड़ेदान या कबाड़ी के हवाले पर मनाएंगे उनमें से भी सहेज लें कुछ चुनने वाले

कपड़े फटेगे देह के तो भी चलेगी नए सिरे से कैंची बनेगा झोला, पोछना, गेंदड़ा दम तोड़ते रूश के साथ आएगा कुछ नया

जीमेंगे मन घर पहले रखकर आगत के लिए गुड़-पानी चिड़ियों के लिए दाने और बीज मिट्टी में

फलेगा-फलेगा घर मगर यह भी सोचेंगे हर पल अपने लिए कम से कम काटना पड़े जंगल सर हँकने के लिए छत हो और खुले रहे दरवाजे तलवों को छील रही कंकरीट के आसपास बची रहे कुछ नर्म-मुलायम घास

जोतेंगे धरती उंगलियों के हल से कि आहत नहीं हों जीवित कोशिकाएं बहाएंगे मगर रखेंगे आंखों में पानी सांसों में हवा हथेलियों में ऊष्मा बचाएंगे जागे हुए सपनों के सच

हमारा होना और करना इस बात से है कि हम खर्च करते वक़्त सहेज लेते हैं क्या-क्या जर्जर से भी जोड़ लेते हैं किनासा कुछ फेकते हैं तो इस धरोरे कि उसकी धूल लौटकर आएगी घर और बहुत झाड़ने-पोंछने के बावजूद छिपी रहेगी जीवन के अंतरों में

इस ब्रह्मांड का लघुतम कण है मेरा हिस्सा इसे ही सहेजना बरतना और बचा लेना कज होती जहां-जहां धरती चींटी की तरह इस शक्कर को दूसरी ओर रखना और उसके भार पर मीठी याद छोड़ जाना।

सही-गलत के धूल भरे निशान धुंधली लिखावट वाली अनमेल चिड़ियां पुरानी यात्राओं के समान

मुझसे अब तक जुड़े अपनों के अक्षय कोष देखती-कहती है मानुषी जाने कितनों से रहा तुम्हारा प्रेम किस-किस से जुड़ी है यह जान !

स्त्री-धन

मालूम है उसे ठीक-ठीक जीवन के लिए जरूरी कितना ठोस कितना तरल कितनी मिठास कितना नमक

चाहिए कितनी ठंडक किस हद तक गर्माहट

आंखों तक आता कितना आकाश सांसों तक जाती कितनी हवा

मालूम है उसे सबकुछ सही धूप से लीटे हुए को कितनी दूर बाद चाहिए पानी देर से सोनाहए पेट को कौन से दाने जानती है वह अच्छी तरह इसलिये घर में कुछ न होने पर भी बूझ लेती है धाड़ उसमें सदा थोड़ा सा सत कहीं बचा हुआ अमृत

संभव है किसी दिन छोड़ जाए धरती पानी और लवण दिखाई न दे कोई किन रुक जाए हवा रीत जाए आकाश

फिर भी वह जुगा लेती भेकते के कुछ दाने मरेनत का नून प्यार की बूंद

बेहद गाढ़े दिनों में भी हारने नहीं देता यह विश्वास कि जब सब हो जाएगा शेष काम आएगा स्त्री का संचित कोष !

असमय नहीं

समय है जहां पहियों पर दोड़ने और पंखों के साथ उड़ने का अपने और अपनों के पीछे छोड़ते कामयाबी की बुलंदियां घुने का वहां जाता नहीं है कहीं खुद से भी बाहर

अफगानिस्तान की मौजूदा हालत को देखकर पारसी की कवयित्री फरीद फरूखजाद का ख्याल आता है। उसकी लंबी कविता की पंक्तियां बड़े अर्थपूर्ण ढंग से दिमाग में चक्कर लगाती मुझे उन मोहल्लों, सड़कों और घरों में ले जाती है जहां से मैं गुजरी हूँ लगाता है। हर रोज़ यही पंक्तियां गुनगुना रही हैं: कोई भी नहीं चाहता यकीन करना कि बाग सूख रहा है/ बाग का दिल धूप में/ झुलस रहा है/ कि बाग का दिमाग धीरे-धीरे/ हरियाली की यादों से खाली हो रहा है/ और बाग का अहसास/तन्हा चीज है, जो दम तोड़ रहा है। जिस बेदरदी से अमेरिका के बमों ने गिर कर अफगानिस्तान का भौंगीलिक नक्शा बदला है, उसने उस ज्यादा गहरे तरीके से औरतों के दिलों में शिगाफ किया है। उनकी गोदें वीरान और घर बर्बाद हो गए। किसी घर में मर्द के नाम पर बच्चा तक नहीं बचा। आखिर पच्चीस वर्ष से चली आ रही लड़ाई जहां मर्दों को निगल रही है वहां औरतों को भटकने पर मजबूर कर रही है। इसका सबसे दर्दनाक नमूना नब्बे साल की कवयित्री 'समनबू' हैं जो आज हेरात की सड़कों पर अपना पहला गजल संग्रह हाथ में पकड़े भीख मांगती रहीं आती हैं। उनकी इस हालत के पीछे सच्चायां हो सकती हैं, पहली यह कि वह हालात की मार से सनक गई हों और गहरे मानसिक संताप के कारण उनका संतुलन बिगड़ गया हो और दूसरा कारण यह हो सकता है कि उनका घर-बार गृहयुद्ध के कारण उजड़ गया हो। लाल फौजों के आने से लेकर आज अमेरिकी बमबारी तक गांव के गांव जल कर राख में बदल गए हैं। पिछले बीस वर्षों में कभी कोई हदसा 'समनबू' को बेसहारा कर गया है। उनकी कविता की चंद पंक्तियां देखें:- क्या करूँ ऐसा जो/ गुजर जाए आज का दिन/ अपनों के हाल पर रोई मैं आज/ नहीं है मेरे पास खाना, पैसा, काप/अपना ही गम बला बन गया है आज।

समनबू की तरह लीदा उम्मीद जीवत नहीं थी। उसने सिर्फ बीस वर्ष खून में डूबे अफगानिस्तान को देखा था। शायद उसकी पैदाइश के समय पड़ानों की रस्मों के मुताबिक बंदूक नहीं दोगी गई होगी, मगर गृहयुद्ध के चलते मशीनगन, मिसाइल और तोपों से हेरात गुंज रहा होगा। यह संवेदनशील कवयित्री १९९९ में अपने ऊपर तेरा छिड़क कर मर गईं। वह अपनी कविता की नोटबुक में बार-बार यह लिखती थी कि मुझे अपना वतन प्यार है। अपने पूरे वजूद के साथ।

हम उन औरतों को बारा कर लेते हैं जो अपनी भाग्यवती को कलम द्वारा कागज पर उतारना जानती हैं, मगर हमारे औरतों कि जो अपना होंट तिले अफगानिस्तान में नई बनती कन्नो के सिराने न रे सैकती हैं न बयान कर सकती हैं, व्यथा-कथा कौन पढ़ेगा, सुनेगा, लिखेगा? ऐसी औरतों को लखर कर १९७६ में मोना नामक महिला ने प्रगतिशील विचार रखने वाली अन्य

उदासीन हैं लेकिन जब कभी मैं उनकी कुछ कविताओं की, जो मुझे याद हैं, आसक्ति का हूं तो उनके चेहरे पर चमक देखता हूं। मेरे विचार से यह अत्यंत मानवीय और स्वाभाविक बात है: खना प्रक्रिया में दूसरे की प्रतिस्पर्धा का कोई भी महत्व नहीं। मैं इस तरह सोचना शुरू नहीं कर सकता कि कौन

की पूर्व-नियोजित ज्यामितिक संरचना होती है जो किसी विशेष विषयवस्तु से संबद्ध होती है। उदाहरण के लिए, कुछ बरस पहले १,५० मीटर गुना १.५० मीटर के एक बड़े कैविस पर एक ध्विज बनाना चाहता था और यह कैविस पर एक ध्विज बनाना चाहता था और यह

ये लड़कियां हरगिज खामोश न हों

अफगानिस्तान

नासिरा शर्मा

खुलेआम लुटमार के लिए भटकते रहते हैं। उसका कारण बेकारी, भूख, कुंठा और महंगाई है। ऐसी हालत में औरतों पर दोहरी मार है। एक तरफ पढ़ने-लिखने, बाहर घूमने-फिरने पर पाबंदी है और दूसरी तरफ सड़क या गली में अकेला निकलना सुरक्षित बिल्कुल नहीं है।

अफगानिस्तान में कई विवाहों का चलन



तिपे-ए-बाला: काबुल का कब्रिस्तान

जाहिर शाह के समय में था। बाद में इस पर पाबंदी भी लगाई गई मगर जो मानी नहीं गई। विवाहित औरतें पूरी तरह पति की मर्जी के हिसाब से चलती हैं। पहले भी कबीलों में मर्द का काम गप्पे मारना, चाय पीना और औरत की जिम्मेदारी खानादारी और खाली समय में कालीन बुनना है। जिसको बेचने का और इससे मिले रूपयों की रखने का अधिकार मर्द को है। कुछ वर्षों पहले एक माओवादी प्रकाशक व कवि १९७६ में भागकर भासत आए थे। बहुत हंसमुख और

मिलनसार उनकी पत्नी से बातचीत के दरम्यान कई बातों का पता चला। एक औरत अफगानी औरत अपनी मर्जी से कहीं भी आ जा नहीं सकती है। यदि वह पढ़ी लिखी है और नौकरी करना चाहती है और अपने मौलिक विचारों को सामने रखना चाहती है तो पति बहुत शालीन स्वर में पंतु फैसलाकुन आवाज में कहेंगा कि खानम! ऐसी हालत में मेरे घर में तुम्हारी कोई जगह नहीं है। मर्द की मर्जी से जीना ही अफगान स्वयं समाज की परंपरा है और इस विषय को अस्वीकार करने का अर्थ है सीत को सहन करना या फिर तलाक की लानत को झेलना।

सबसे ज्यादा अत्याचार औरतों ने उस समय झेला जब तालिबानों और उत्तर के अहमद शाह, मसूद में ठन गई। तालिबान के हमलों और उत्तरी भाग में लड़ाई के कारण अक्सर बेसहारा औरतें अपने जले घर-बार और मरे मर्दों की पीछे छोड़ काबुल की तरफ पनाह लेने के लिए भारती तो उनके पास कभी टेंकर भर अंगूर होता या फ्रिज बुखारी। बहुत कम औरतें ऐसी थीं जो अपने चौपायों को अपने साथ ले आ पाईं, जिनको के बच कर उन्होंने अपनी जिंदगी को तस्वीर दिया, वरना अक्सर चौपाए औरतों से संभल न पाने के कारण रास्ते में भाग जाते। जवान गर्भवती औरतों को ऐसी हालत में जब दर्द शुरू होता तो किसी तरह पतियों को आइ बना उनको बच्चे के जन्म में मदद करनी पड़ती। कुछ अमीर घर के बच्चों का अपहरण कर फिरोज़ी मांगी जाती या फिर ताजिक होने के कारण उन औरतों को जेल में डाल दिया जाता और खाने-पीने की सुविधा न होती। रास्ते में छापामार, अपहरणकर्ता, बलात्कार, चोर-उत्तक, हर तरह के लोग इन बेसहारा औरतों को पोशान करने के लिए मौजूद रहते। जो औरतें मर्दों के साथ पुसुंति मिले तो वह त्राम मलें। उनका मुंह तो रोज कई-कई बार आंसुओं से धुलता है। अफगान औरत सात दबाव के बावजूद हालात से जुझ रही है। शामूल के शब्दों में मैं कहना चाहूंगी:

ध्यान के जले खेत के फिनारे/शांत छाड़ी बाला/ हान में हिलते उसके महीन कपड़े/ खुदाया, खुदाया / ये लड़कियां, हरगिज खामोश न हों/ हर कठिन छार से गुजरने के लिए बाध्य हैं। चाहने न चाहने के बावजूद वह आतंकवादियों,

छापामारों, कठमुल्लाओं, रूढ़िवादियों की मां, बहन, बेटी कहलाने के लिए मजबूर हैं। बमबारी में भागी बूढ़ी औरतों का रोना और पीड़ा का वह कर्सेलापन कि अपनों को दफनाए बिना वह लाशें खुले आसमान के नीचे छोड़ भाग आई हैं।

अफगानिस्तान का इतिहास साक्षी है कि किसी दौर में चाहे वह बाएँ बाजू वाली सरकार या दाहिने बाजू वाली सरकार हो, किसी ने भी औरत से नहीं पूछा कि तुम कौन सी व्यवस्था देश के लिए चाहती हो। आज भी नहीं सरकार बनाते हुए विश्व के विकसित देश किसी भी अफगान स्त्री को भागीदारी की जरूरत महसूस नहीं कर रहे हैं जबकि विश्व प्रेस ने महिला दमन को सबसे लोमहर्षक कहानियां अफगानिस्तान के संदर्भ में छापीं और दिखाई दीं। पंतु जब वास्तव में कानून बनने का समय आता है या हिस्सा मिलने का अवसर होता है, उस समय औरत नेपथ्य में चली जाती है। तब वह अपना मुकदर पुरुष में, राष्ट्र में, परिवार में देखने पर मजबूर कर दी जाती है।

आज से नहीं पिछली कई दहाइयों से अफगान बच्चियां बेची जा रही हैं, घरों में काम करने वाली नौकरानियों के रूप में। उनके मां-बाप की दोहरी मानसिकता है। पहली कुछ धन की प्राप्ति दूसरे बच्चों का लालन-पालन न कर सकने का दबाव। सो वह इसी में अपनी मुक्ति देखते हैं कि चलो बेटीयां कहीं पेट तो भर रही हैं। जवान लड़कियां वेश्यावृत्ति में फंस चुकी हैं, पेट की आग बुझाने पतिव्रताओं का खर्च उठाने के लिए। इसके अलावा उनके पास कोई विकल्प नहीं है। अब तो ११ सितंबर को पेंटागन का अक्रमण के बाद अफगानों को काम मिलना भी कठिन होता जा रहा है विशेषकर औरतों को, जो अपेक्षे उम्र में घरों में केक बनाते, सिलाई और सफाई का काम करके या चटनी, अचार, मसूर बना कर अपना गुजारा कर लेती थीं। बहुत कम मदद करनी पड़ती। कुछ अमीर घर के बच्चों का अपहरण कर फिरोज़ी मांगी जाती या फिर ताजिक होने के कारण उन औरतों को जेल में डाल दिया जाता और खाने-पीने की सुविधा न होती। रास्ते में छापामार, अपहरणकर्ता, बलात्कार, चोर-उत्तक, हर तरह के लोग इन बेसहारा औरतों को पोशान करने के लिए मौजूद रहते। जो औरतें मर्दों के साथ पुसुंति मिले तो वह त्राम मलें। उनका मुंह तो रोज कई-कई बार आंसुओं से धुलता है। अफगान औरत सात दबाव के बावजूद हालात से जुझ रही है। शामूल के शब्दों में मैं कहना चाहूंगी:

ध्यान के जले खेत के फिनारे/शांत छाड़ी बाला/ हान में हिलते उसके महीन कपड़े/ खुदाया, खुदाया / ये लड़कियां, हरगिज खामोश न हों/ हर कठिन छार से गुजरने के लिए बाध्य हैं। चाहने न चाहने के बावजूद वह आतंकवादियों,

बिंदु का नाद

अंदर से आते संदेश को पकड़ना बहुत जरूरी है। अकेले छना लुटत कठिन है। मेरे हिसाब से वह

हाथ में लेने को उदात्त थे और इस अगर उसाह और आनंद के बीच यह ट्रेजिक घटना हुई। मैं

भास स्वतंत्र हो हुआ था। वह उस वक़्त हुआ जब हम जवानों और उर्जा से भरे हुए थे। हम अपनी निवृत्ति अपने

रक्त कट्टर प्रवृत्तियां किसी न किसी किस्म की धार्मिक संवेदना से उत्पन्न हुई हैं। इसलिए संवेदना का एक आधार तो है ही। ऐसे हालात में आप हिंदू धर्म, बौद्ध धर्म, इस्लाम के प्रति समान महत्व की वकालत कर रहे हैं। इस प्रमुखता: धर्मनिरपेक्ष मार्ग ब्रह्म में आप खुद को कहाँ पाते हैं? मेरे दृष्टि में साय धार्मिक विश्वास मूलतः निजी

बसो पुराने पड़े पड़े
दाग रह गए हैं
आँखों और नमी के
कुछ स्याहियों के छोटें

रही के भाव बेच नहीं इन्हें
रखा है तह पर तह कर

लिबास जो होते गए छोटें
जगह-जगह मसकने
और दारकने के बावजूद
नई चीजों से बदले नहीं

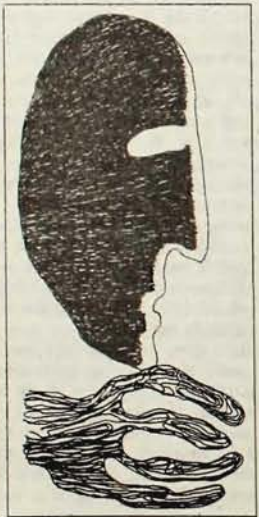
देखा है इन्हीं से
अपने जीवन का अक्स
छूटने समय के बरअक्स

ईंट कंकरीट से बने घर में
बचाए रखी है मिट्टी की परत
सुरक्षित है जहाँ
कई पीढ़ियों की छुअन

पहली भोर से जल रहे
सूरज और चूल्हे की आंच पर
पक और पग रहा अपना मन
पहली ही साँझ से लगाए रखा है
आँखों में अंजन

कद काटते बड़प्पन में
जुगाया है स्मृतियों का बालपन
पथराए शरीर की खोह में
मिशाली आत्मा
मचलता मन

दिलो-दिमाग के दरगजों में हैं
लाल-काली तारीखों वाली डायरियों



लगाता चक्कर
झेलता लगातार जीवन के दिन-रात

सेहत मेरी बुरी न बय बहुत अधिक
सामर्थ्य इतना जरूर कि मेले में कुछ देर
टिक सकूँ

ऐसा भी नहीं कि इस व्यवस्था से हूँ
अभिन्न

जानता हूँ कि सफर में किसी तरह
चलते रहना

युद्ध और प्रेम में सबकुछ करना जायज है
मागर मैं शब्दों की दुनिया में इतना खोया
कि कई बार अपना नाम भी
याद नहीं रहा।

ऐसा नहीं कि बहुत छोटा है यह संसार
जीवाश्म की तरह इसकी एक-एक ईंट
का है इतिहास

हर स्मृति का है वर्तमान और भविष्य
इसकी धड़कनों से फूटता है काव्य
हालांकि मेरे पास पत्रे नहीं इतने कि
लिख सकूँ सब

चौकस नहीं उतना कि सुन सकूँ भीड़ की
हर आवाज

और शून्य में लगातार गूँज रहा निःशब्द

मगर रेशा-रेशा रचता हूँ जो कुछ
असल में वही होती है कला

सूत भर साँस और बुंद भर
आस पर रहने की

वही है निजीविषा वही साधना
आदमी और आदमियत को समझने की

वे हैं स्तब्ध और क्षुब्ध
कि मौन पड़ा क्या कर रहा

इस मुछड़ा जीवन का
क्यों नहीं समझ पा रहा कि दीमकों से
भरे संसार में

पत्रों पर उतनी इबारत का क्य भविष्य
और इस मन का भी क्या भरोसा

कि आप उसमें कुछ रखें और पुन न लगे
दिल की बात कहते हुए दिमाग न फिरे

वे समझते हैं मुझे हठी और खतरनाक
पेशान हैं कि जब आदमियत चली गई
क्यों बार-बार आता है

पूछ और सच का नाम
जब मौसम हो मौज-मस्ती और
धुम-धड़ाके का

वे धमाके से मेरा काम कर देना
चाहते हैं तमाम

चुरा लेना चाहते हैं आत्मा का चित्राग

सबसे जरूरी समय है सोचने का जब
कुछ समझ न आए

विचार करने और रखने का जब सब
खाली होता जाए

सबसे जरूरी समय है पढ़ने का
जब कुछ पढ़ा न जाए

गढ़ने का नया जख होठों से
कुछ न जाए

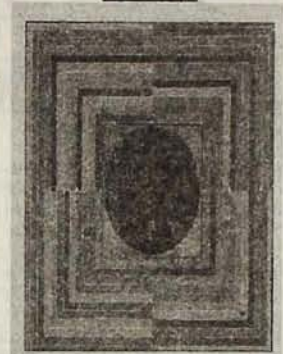
सबसे जरूरी समय है यह कि
असमय न हो जाए

किसी नहीं। हमें क्रिया में पूरी तरह संलग्न
रहना चाहिए, पूरी एकाग्रता के साथ और
रचना में दुबा होना चाहिए। एकाग्र
जिस चीज के लिए मैं प्रार्थना करता हूँ
कि मेरी सारी वृत्तियाँ समन्वित हों, कि
शरीर और मन ही हो सकते हैं। रा असंख्य मानवीय
भावनाओं को प्रकाशित कर सकते हैं जिनकी
हमारे भीतर क्षमता है और मैं कोशिश कर रहा हूँ
कि उन्हें पर जीवंत किया जा सके। यह एक
निर्वात नया अनुभव लोक खोलता है। इस चित्र
के द्वारा, मैंने सोचा, सलमान साधनों से मैं उस
को भी और इशारा कर रहा हूँ जो प्रकृति में
मूलभूत है। जीवन में, गर्भावस्था में, जन्म और
मरण में ध्रुवांतर। भारतीय विचारों के आधार पर
और उनकी सहायता से इस प्रकार की एक वस्तु
परिचित की जा सकती है। मैं उदाहरण के
लिए एक दूसरा चित्र लेता हूँ जिससे रा-समय-य
की बात साफ हो सके। एक बिंदु जो एक रंग
है और दूसरे में विकीर्ण होता है: यह एक विशिष्ट
रंग-स्थिति है जो प्रकाश के श्रमणों से संबंध
की पुनः याद दिलाती है। यह अदृश्य वास्तविक
यथाथ बिंदुनाद है। एक और उदाहरण। एक बीज
के रूप में बिंदु, एक अनिवार्य ज्यामितीय
आकृति- यह विचार मेरे दिमाग में गड़ा हुआ है।
बीज ऊर्जा विकीर्णित होती है और वह ऊर्जा रंगों
में प्रकट होती है जो जले, पीले, नीले और लाल
हैं। अब यह रहा एक बिंदु पाँच रंगों से युक्त
काला संकेतित वृत्तों में विकीर्ण है, दूसर जले
की ओर जा रहा है, नारंगी पीले की ओर, गहरा
लाल अरुणो लाल मिलता सा और गहरा नीला
आसमानी की ओर जाता हुआ। एक मूलभूत
चित्रात्मक यथार्थ। मैं और आगे जाऊँगा। मैं इसी
पंचतत्व बिंदु को के केंद्र में रख रहा। और
उसके गिर्द अपना उपवन, अपना संसार, केंद्रीय
बिंदु से पाँच रंगों में उपरता हुआ। यह मेरा उपवन
है, यही मेरी दृष्टि है। मुझे नहीं पता कि भारत
के किस संग्रह में यह कलाकृति है, पर यह मेरे
सर्वश्रेष्ठ में से है। फिर भी योजनाएँ हैं जो उसी
जलविंदु से निकली हैं: दुर्गायवश वह चित्र
कान से पैसि आते हुए एक टुक से चोरी हो
गया। मेरे पास राजस्थान के चित्र हैं जो रंग का
आह्लाद प्रकट करते हैं। यहाँ पुनः चित्रात्मक
तर्क महत्वपूर्ण होगा। निरपवाद रूप से,
चित्रात्मक स्थितियाँ भिन्न-भिन्न होती हैं। आपको
आशु रचना करना होती हैं, कार्य के दीर्घन निर्णय
लेने होते हैं, जो, मैं कहूँगा, बुद्धि पर नहीं, काम
है। यह कहीं संभव है कि लिखना हो कहीं महान
कलाकार या कवि अपने जीवन में सफलता से
वंचित हो, उनका ही कोई सार्थक कलाकार या
कवि अपने जीवन में ही प्रशंसित हो।

आप किसी नए रंग का आविष्कार या
उसकी खोज कैसे करते हैं? जैसा आपने
कहा, वह क्या है जो पाँच मूल रंगों की ओर
ले जाता है? आप रंगों को कैसे ग्रहण करते
हैं, एक रंग को दूसरे से कैसे मिलते हैं या
कैसे रंग की नई दृष्टि उठते हैं? क्या यह
एक सचेत क्रिया है? यह क्या कम्पोज़र उस
सर्जनात्मक प्रक्रिया सी नहीं जिसमें आप
उसकी वस्तु की ओर हाथ बढ़ाते हैं जिसे
अवगत नहीं जानते लेकिन जिसकी
किसी अदृश्य कारण से तीव्र आवश्यकता
अनुभव करते हैं?

मेरे अपने अनुभव में और पिछले कुछ बसों
में मैं जिस तरह बढ़ रहा हूँ, मेरे पास किसी चित्र
अनेकानेक त्रिभुज थे।
ज्यामिति स्थिर होती है पर एक रंग का दूसरे
से संबंध वस्तुतः सामाज्य का प्रश्न है। रा
एक-दूसरे के प्रति अनुग्राह्य रख सकते हैं और
उदासीन भी हो सकते हैं। वे एक दूसरे के प्रति
शत्रुतापूर्ण भी हो सकते हैं। रा असंख्य मानवीय
भावनाओं को प्रकाशित कर सकते हैं जिनकी
हमारे भीतर क्षमता है और मैं कोशिश कर रहा हूँ
कि उन्हें पर जीवंत किया जा सके। यह एक
निर्वात नया अनुभव लोक खोलता है। इस चित्र
के द्वारा, मैंने सोचा, सलमान साधनों से मैं उस
को भी और इशारा कर रहा हूँ जो प्रकृति में
मूलभूत है। जीवन में, गर्भावस्था में, जन्म और
मरण में ध्रुवांतर। भारतीय विचारों के आधार पर
और उनकी सहायता से इस प्रकार की एक वस्तु
परिचित की जा सकती है। मैं उदाहरण के
लिए एक दूसरा चित्र लेता हूँ जिससे रा-समय-य
की बात साफ हो सके। एक बिंदु जो एक रंग
है और दूसरे में विकीर्ण होता है: यह एक विशिष्ट
रंग-स्थिति है जो प्रकाश के श्रमणों से संबंध
की पुनः याद दिलाती है। यह अदृश्य वास्तविक
यथाथ बिंदुनाद है। एक और उदाहरण। एक बीज
के रूप में बिंदु, एक अनिवार्य ज्यामितीय
आकृति- यह विचार मेरे दिमाग में गड़ा हुआ है।
बीज ऊर्जा विकीर्णित होती है और वह ऊर्जा रंगों
में प्रकट होती है जो जले, पीले, नीले और लाल
हैं। अब यह रहा एक बिंदु पाँच रंगों से युक्त
काला संकेतित वृत्तों में विकीर्ण है, दूसर जले
की ओर जा रहा है, नारंगी पीले की ओर, गहरा
लाल अरुणो लाल मिलता सा और गहरा नीला
आसमानी की ओर जाता हुआ। एक मूलभूत
चित्रात्मक यथार्थ। मैं और आगे जाऊँगा। मैं इसी
पंचतत्व बिंदु को के केंद्र में रख रहा। और
उसके गिर्द अपना उपवन, अपना संसार, केंद्रीय
बिंदु से पाँच रंगों में उपरता हुआ। यह मेरा उपवन
है, यही मेरी दृष्टि है। मुझे नहीं पता कि भारत
के किस संग्रह में यह कलाकृति है, पर यह मेरे
सर्वश्रेष्ठ में से है। फिर भी योजनाएँ हैं जो उसी
जलविंदु से निकली हैं: दुर्गायवश वह चित्र
कान से पैसि आते हुए एक टुक से चोरी हो
गया। मेरे पास राजस्थान के चित्र हैं जो रंग का
आह्लाद प्रकट करते हैं। यहाँ पुनः चित्रात्मक
तर्क महत्वपूर्ण होगा। निरपवाद रूप से,
चित्रात्मक स्थितियाँ भिन्न-भिन्न होती हैं। आपको
आशु रचना करना होती हैं, कार्य के दीर्घन निर्णय
लेने होते हैं, जो, मैं कहूँगा, बुद्धि पर नहीं, काम
है। यह कहीं संभव है कि लिखना हो कहीं महान
कलाकार या कवि अपने जीवन में सफलता से
वंचित हो, उनका ही कोई सार्थक कलाकार या
कवि अपने जीवन में ही प्रशंसित हो।

आप जो कहना चाहते हैं, उसका सातत्य रख
पाते हैं। यह मुक्ति की शूद्र अवस्था है जो
शब्दाली है। मुझे पता है कि कभी-कभी आप
सचेत हो जाते हैं पर सचेत होना इस गतिविधि के
लिए बाधक है। मैं जानता हूँ कि तर्क, बुद्धि
अनुपस्थित नहीं। पर यह मुख्य क्रिया का गौण
अंश है। वस्तुतः, मैं दोहराना चाहूँगा, चिंतन तो
उच्चतम सर्जनात्मक क्रिया के लिए किसी न
किसी प्रकार बाधक है।
आपकी सबसे बड़ी निराशाएँ क्या थीं हैं?
मुझे सबसे अधिक निराशा, दुष्ट के समान,
१९४८ में हुई जब महाना गांधी की हत्या कर
दी गई। यह एक व्यक्ति की कतल थी जिसके
अपने विश्वास थे। यह ठीक उस समय हुआ जब



संगीतकार कुमार गंधर्व पर विशेष प्रसन्न के
बाद अशोक वाजपेयी की नई किताब 'रत्ना'
पुनः की दुनिया में एक अनूठ आगोजन है।
आंग्रेजी में यह इसी हस्ते लोकार्पित होने जा
रही है और हिंदी में भी इसके जल्द सामने आने
की उम्मीद है। दो कला-संवेदनाओं का यह
संवाद एक रचनाकार का अपने अग्रज
रचनाकार को नमन भी है और कला, समय
और समाज के विचारों के जलपट्टों को एक
सर्जक की नजर से समझने की कोशिश भी।
विनय जैन द्वारा आकल्पिक और पैरिस के एच
कुमार द्वारा प्रकाशित यह 'पोर्ट्रेट्स' एक
संस्कृतगीय दस्तावेज बन गया है: वाचचित के
आलेख और इसी पत्रगीय सामग्री के साथ
रत्ना की बुनियादी कलाकृतियों के प्रिंट तो हैं ही,
रत्ना के तीन मूल सिक्के स्त्रीय/लिथोग्राफी भी
इसमें संजोये गए हैं।

आप जो कहना चाहते हैं, उसका सातत्य रख
पाते हैं। यह मुक्ति की शूद्र अवस्था है जो
शब्दाली है। मुझे पता है कि कभी-कभी आप
सचेत हो जाते हैं पर सचेत होना इस गतिविधि के
लिए बाधक है। मैं जानता हूँ कि तर्क, बुद्धि
अनुपस्थित नहीं। पर यह मुख्य क्रिया का गौण
अंश है। वस्तुतः, मैं दोहराना चाहूँगा, चिंतन तो
उच्चतम सर्जनात्मक क्रिया के लिए किसी न
किसी प्रकार बाधक है।
आपकी सबसे बड़ी निराशाएँ क्या थीं हैं?
मुझे सबसे अधिक निराशा, दुष्ट के समान,
१९४८ में हुई जब महाना गांधी की हत्या कर
दी गई। यह एक व्यक्ति की कतल थी जिसके
अपने विश्वास थे। यह ठीक उस समय हुआ जब

आपने एक बड़े किताब और कुछ का कवच
नहीं कर सकता। हमें शून्य और हलाका का,
अत्यंत क्षोभ का अनुभव हुआ। मुझे याद है ये
विचारों के साथ संबद्ध जो उससे उत्पन्न होते हैं।
कला प्रायः आख्यान से इतर अन्य वस्तु का
संकेत करती है जो महत्वपूर्ण है, और ऐसा
कविता में भी होता है। किंतु पूरी एकाग्रता
आवश्यक है। यहां अतीत, वर्तमान और भविष्य
मिलते हैं, जहाँ आधुनिक स्थिति, प्रजातीय
अवचेतन, अनुरी शिखा और प्रशिक्षण, आपकी
रोजमर्रा की जिंदगी सब एक विचित्र और
अनिर्वचनीय ढंग से एक साथ मिलते हैं और

आपने कुछ जीवन मूल्यों का जिक्र किया
है जिससे आपको प्रेरणा मिली, ये जीवन-
मूल्य क्या हैं?

अगर मैं ठीक समझ पाया हूँ तो जीवन मूल्य
अन्तः मानवीय मूल्य हैं- मानवीय लगाव या
उत्साह और यह बोध कि जीवन कितना असाधा
रुण है, कितना मूल्यवान और कितना अदभुत।
लेकिन मानवीय मस्तिष्क शायद ही उस
क्षम्यमय अस्तित्व का, जो कि हमारा जीवन
और प्रकृति है, एक कठरा भी मुश्किल से समझ
पाता है। जीवन-मूल्य ही मूलभूत हैं, कल्पना की
उड़ान का, रचना का आधार जो आवश्यक है
उसे परिभाषित करने का, सही-गलत को पहचान
ने का पैमाना। जीवन के मूलभूत मूल्य वे हैं जो
एक पुरुष और एक स्त्री मिलकर एक टीम की
तक, पूरकों की तरह विकसित करते हैं। तब क्या
करना होता है जब दोनों के संयोग से संतानें
उत्पन्न हों? यह जरूरी होगा कि बच्चा जब आँखें
खोलें, चलना सीखे तब आप उसे चलने,
दखने-बोलने में मदद करें। बच्चा, आचर्य के
साथ दुनिया को देखता है, समझने की कोशिश
करता है कि भय क्या है, आह्लाद क्या है, प्रेम
क्या है, इत्यादि। मां यहां महत्वपूर्ण भूमिका अदा
करती है लेकिन हम सब इस जीवन को मूल
मानवीय स्तर की तरह ग्रहण कर सकते हैं जो न
सिर्फ बच्चों को बढ़ाने में मदद करता है बल्कि
परिपक्वता के हमारे दौर से हमें मूल्यों को सही
पैमाना चुनने में मदद करता है, उन्हें स्थापित
करने और उनके मुताबिक जीवन जीने में
सहायता करता है। हमारे रोजमर्रा के जीवन में,
प्राणी जीवन में, मानवीय जीवन में व्यक्त होने
वाली इस अमूल्य प्रकृति से ही एक-दूसरे के
लिए प्रेम, मानवीय लगाव उत्पन्न होता है। आप
लेकिन कोटियाँ से होते हुए जीवन के विकास
में, पशुओं के स्तर से उच्चतर स्तर तक हम एक-
एक अवस्था पार कर ही बढ़ते हैं। और सबसे
महत्वपूर्ण अवस्था में एक खास आध्यात्मिक
परिष्ठा देनी पड़ती है जो हम सबसे धार्मिक
विश्वास द्वारा ली जाती है। मेरे विचार से यह
संभव है और मैं खुद अपने मामले में कोशिश
कर रहा हूँ कि भारत में मुख्यतः कम से कम तीन
धर्मों के बीच के समानतत्व की तलाश की जाए।
और चाहे जो हो, खुद मैं अपनी चेतना के स्तर
पर हिंदू धर्म और ईसाई धर्म से प्रभावित रहा।
मेरी समझ में यह सोचना मुमकिन है कि ऐसे
मूलभूत मूल्य होते हैं जिन्हें इस प्रकार का भीति
कवादी युग, जिसमें हम रह रहे हैं बुहार कर किनारे
कर सकता।

वे तब भी अप्रासंगिक नहीं हुए जब दुनिया
के अनेक हिस्सों, यहां तक कि भारत के अर्थात्
धर्म बौद्धिक संवर्ग में भी मार्क्सवाद प्रभाव
शाली था। मैं महसूस करता हूँ कि वह बिल्कुल
संभव है और निजी तौर पर मैं अपने बारे में बोल
सकता हूँ कि प्रार्थना, धर्म और जीवन-मूल्यों की
एक सर्वव्यापी सार्वभौम अवधारणा विकसित
की जाए।